ISSN:
[xxxxxxxxxx]

Bharatiya Nav Shodh Adhyayan Patrika
Volume 1, Issue 1 | October- December 2026 | Pages 63-69

हिन्दी दलित कहानियों में आत्मसम्मान और स्वाभिमान की स्थापना

डॉ. मनुप्रताप

हिन्दी विभाग, महात्मा ज्योतिबा फुले (एम.जे.पी.) रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली, उत्तर प्रदेश भारत

Received: 09/08/2026

Revised: 25/09/2026

Published: 02/10/2026

E-Mail
drmanupratap25@gmail.com

DOI

[XXXXXXXXXXXXXXXXXX]

Copyright

© The Authors. This article is published by Bharatiya Nav Shodh Adhyayan Patrika.

How to Cite
Pratap, M. (2026). हिन्दी दलित कहानियों में आत्मसम्मान और स्वाभिमान की स्थापना. Bharatiya Nav Shodh Adhyayan Patrika, 1(1), 63–69.
डॉ. मनुप्रताप (2026)। हिन्दी दलित कहानियों में आत्मसम्मान और स्वाभिमान की स्थापना। भारतीय नव शोध अध्ययन पत्रिका, खंड 1, अंक 1, अक्टूबर–दिसंबर 2026, पृ. 63–69।

सारांश/ Abstract

प्रस्तुत शोध-पत्र में हिंदी दलित कहानियों में आत्मसम्मान और स्वाभिमान की स्थापना का अध्ययन किया गया है। इसमें दलित साहित्य के माध्यम से जातिगत भेदभाव, सामाजिक बहिष्कार, अपमान तथा शोषण के चित्रण के साथ-साथ दलित समुदाय में विकसित आत्मचेतना, अस्मिताबोध, प्रतिरोध और मानवीय गरिमा की भावना का विश्लेषण किया गया है। इस अध्ययन में डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन की कहानी 'रावण' , ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'बैल की खाल' , रजतरानी मीनू की 'चमकली' तथा जयप्रकाश कर्दम की 'मोहरें' को आधार बनाया गया है। इन कहानियों के माध्यम से जातिगत पूर्वाग्रहों, परंपरागत व्यवसायों तथा भेदभावपूर्ण सामाजिक व्यवस्थाओं के विरुद्ध दलित पात्रों के संघर्ष को प्रस्तुत किया गया है। कहानियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि शिक्षा, प्रतिभा, श्रम, नैतिक मूल्यों, आत्मनिर्भरता और संवैधानिक अधिकारों के प्रति जागरूकता के माध्यम से सम्मानपूर्ण जीवन की स्थापना संभव है। इन कहानियों के पात्र अपमान और अन्याय को नियति मानकर स्वीकार नहीं करते, बल्कि उसके विरुद्ध संघर्ष करते हुए अपनी अस्मिता और अधिकारों की स्थापना का प्रयास करते हैं। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि दलित साहित्य दमनकारी सामाजिक संरचनाओं को चुनौती देने तथा सामाजिक न्याय, समानता और सकारात्मक परिवर्तन की चेतना विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। निष्कर्षतः हिंदी दलित कहानियों में आत्मसम्मान केवल व्यक्तिगत भावना नहीं, बल्कि सामूहिक अस्मिता, प्रतिरोध और न्यायपूर्ण एवं समतामूलक समाज की स्थापना की आकांक्षा का सशक्त माध्यम है।

मुख्य शब्द : **दलित साहित्य, हिंदी दलित कहानी, आत्मसम्मान, स्वाभिमान, दलित चेतना, जातिगत भेदभाव, मानवीय गरिमा, सामाजिक न्याय, शिक्षा,**

ISSN:
[xxxxxxxxxx]

Bharatiya Nav Shodh Adhyayan Patrika
Volume 1, Issue 1 | October- December 2026 | Pages 63-69

1. प्रस्तावना

दलित हिंदी साहित्य मूलतः आधुनिक काल की देन है। कहानी, उपन्यास, आत्मकथा आदि विधाओं में ज्यादातर दलितों के जीवन को लेकर लिखा गया है। दलितों के विचार-चिंतन एवं वैचारिक जागरण को साहित्य में चित्रित किया गया है। सदियों से भारतीय समाज में दलितों पर अन्याय अत्याचार शोषण होता रहा है। सवर्णों का दलितों पर होनेवाला अन्याय, अत्याचार धीरे-धीरे उनके विचारों को साहित्य में अभिव्यक्ति मिली। दलितों को आत्मचेतना, आत्माभिमान एवं अस्तित्वबोध की प्रेरणा मिली। हिंदी साहित्य में दलित समुदाय के शोषण एवं अपमान तथा उसमें विकसित हो रहे संघर्ष तथा अस्मिता की चेतना को मार्मिक ढंग से प्रतिबिंबित किया है। इसमें प्रेमचंद, नागार्जुन, अमृतलाल नागर, जगदीशचंद्र, मैत्रेयी पुष्पा, मदन दीक्षित, मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि, सूरजपाल चौहान आदि कई साहित्यकार है जिन्होंने अपने साहित्य में दलित आंदोलन और डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा एवं कार्यक्रमों से प्रेरित-संचालित होकर दलित समुदाय में विकसित प्रतिरोध की चेतना को रेखांकित ही नहीं किया बल्कि प्रगतिशील रचनाधर्मिता की माँग को पूरा करते हुए उसे औपन्यासिक अभिव्यक्ति दी। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर जी ने 'मूकनायक' एवं “बहिष्कृत' यह पत्र निकालकर दलितों की सदियों से कैद आवाज को शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान की अतः उनके पदचिन्हों पर चलते हुए कई दलित या गैर दलित साहित्य सृजन में लग गये। वे दलितों की व्यथा, उनकी स्थिति, अभिव्यक्ति को अपने उपन्यास, कहानी, आत्मकथा, कविता आदि में लिखने लगे। दलित साहित्य को समृद्ध एवं सशक्त बनाने में अम्बेडकर जी का बहुत बड़ा योगदान रहा है।

2. आत्मसम्मान और स्वाभिमान की वैचारिक पृष्ठभूमि

भारतीय समाज में सदियों से चली आ रही वर्ण-व्यवस्था ने दलित समुदाय को सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से हाशिए पर रखा। उन्हें अस्पृश्यता, अपमान और अमानवीय व्यवहार का सामना करना पड़ा। ऐसे समय में दलित साहित्य ने उनके मौन को स्वर दिया। विशेषत: दलित कहानियों ने यह स्थापित किया कि दलित समाज दया का नहीं, बल्कि सम्मान और समान अधिकार का अधिकारी है। इस दृष्टि से आत्मसम्मान और स्वाभिमान की स्थापना दलित कहानी का केंद्रीय सरोकार बनकर उभरती है।

दलित कहानीकारों ने अपने पात्रों के माध्यम से यह दिखाया है कि मनुष्य का सम्मान उसकी जाति से नहीं, बल्कि उसके श्रम, व्यक्तित्व और मानवीय गरिमा से निर्धारित होना चाहिए। इन कहानियों में पात्र अपमानजनक परम्पराओं को स्वीकार करने के बजाय उनका विरोध करते हैं। वे अपनी अस्मिता और अधिकारों के लिए संघर्ष करते हैं तथा सामाजिक परिवर्तन की दिशा में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। शिक्षा, आर्थिक आत्मनिर्भरता और सामाजिक जागरूकता को आत्मसम्मान प्राप्त करने का प्रमुख साधन माना गया है।

3. ‘रावण’ कहानी में आत्मसम्मान की स्थापना

ISSN:
[xxxxxxxxxx]
Bharatiya Nav Shodh Adhyayan Patrika
Volume 1, Issue 1 | October- December 2026 | Pages 63-69

डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन की कहानी 'रावण' दलित जीवन के यथार्थ, जातिगत भेदभाव और आत्मसम्मान के संघर्ष को अत्यंत मार्मिक एवं प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती है। यह कहानी केवल एक कलाकार की कथा नहीं है, बल्कि उस दलित समाज की पीड़ा, प्रतिरोध और स्वाभिमान की कहानी है जिसे सदियों से सामाजिक अपमान और अस्पृश्यता का सामना करना पड़ा। कहानी का मुख्य पात्र मूलसिंह एक प्रतिभाशाली कलाकार है, जो दिल्ली में अपनी अभिनय-कला के लिए सम्मान प्राप्त करता है, लेकिन अपने ही गाँव में उसकी जाति उसके हुनर से बड़ी साबित कर दी जाती है। इसके बावजूद वह अपने आत्मसम्मान से समझौता नहीं करता।

जब मूलसिंह को गाँव की रामलीला में रावण की भूमिका निभाने का प्रस्ताव मिलता है, तब उसके पिता सामाजिक भेदभाव के कारण उसे मना करते हैं। लेकिन मूलसिंह अपने आत्मविश्वास और स्वाभिमान के साथ कहता है- "मैं अपनो हुनर ही तो दिखांगो, काऊ ते खैरात थोड़े ही माँगंगो।"[1] यह कथन स्पष्ट करता है कि वह अपनी प्रतिभा के बल पर सम्मान चाहता है, किसी की दया या कृपा पर नहीं। उसके लिए कला उसकी पहचान है, जाति नहीं रामलीला समिति के सदस्य जीतराम उसे समझाते हैं- "मूलसिंह, जात-पांत देश में है, पर कलाकार की कोई जात नहीं पूछी जाती।"[2] यह संवाद समानता का आदर्श प्रस्तुत करता है, किंतु कहानी आगे चलकर दिखाती है कि व्यवहार में समाज अभी भी जातिगत

पूर्वाग्रहों से मुक्त नहीं हुआ है। इस प्रकार लेखक आदर्श और यथार्थ के बीच के अंतर को उजागर करते हैं। जब मंच पर कुछ सवर्ण पात्र यह कहते हैं- "नहीं, चमार को सिर नहीं झुकाया जा सकता।"[3] तब यह केवल मूलसिंह का नहीं, बल्कि पूरे दलित समाज के सम्मान का अपमान है। इसके बाद मूलसिंह को मंच से उतारने और पीटने का प्रयास किया जाता है। फिर भी वह डरकर भागता नहीं, बल्कि प्रतिरोध करता है- "मूलसिंह ने झटका मारा... रावण की पोशाक और गत्ते की तलवार फेंक अपने हाथों से जवाबी हमला करने लगा।"[4] यह प्रसंग उसके आत्मसम्मान और अन्याय के विरुद्ध प्रतिरोध की भावना को स्थापित करता है। मूलसिंह बार-बार यह विश्वास व्यक्त करता है कि उसकी पहचान उसकी कला से होनी चाहिए- "दिल्ली में हजारों दर्शक सराहते हैं मेरे पाठ कूँ। तौ का गाम में सब के सब निन््दा ही करेंगे? जात सब देखगे, हुनर कोई नाय देखैगो?"[5] यह संवाद दलित चेतना का महत्वपूर्ण स्वर है। वह चाहता है कि व्यक्ति का मूल्यांकन उसकी योग्यता के आधार पर हो, न कि उसकी जाति के आधार पर।

'रावण' कहानी में डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन ने यह सिद्ध किया है कि दलित समाज की सबसे बड़ी लड़ाई आर्थिक नहीं, बल्कि सम्मान और अस्मिता की लड़ाई है। मूलसिंह एक ऐसा पात्र है जो अपमान सहता है, संघर्ष करता है, लेकिन अपने स्वाभिमान से समझौता नहीं करता उसकी कला, उसका प्रतिरोध और उसके निर्णय यह संदेश देते हैं कि मनुष्य की वास्तविक पहचान उसकी प्रतिभा, श्रम और मानवीय गरिमा है, न कि उसकी जाति। इस प्रकार 'रावण' दलित आत्मसम्मान, सामाजिक न्याय और मानवीय समानता की एक सशक्त कहानी बनकर सामने आती है।

ISSN:
[xxxxxxxxxx]
Bharatiya Nav Shodh Adhyayan Patrika
Volume 1, Issue 1 | October- December 2026 | Pages 63-69

4. 'बैल की खाल' में जातिगत पेशे से मुक्ति की आकांक्षा

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'बैल की खाल' में काले और भूरे जातिगत पेशे और अपमानजनक व्यवहार से आहत हैं। काले का यह कहना- "भूरे, हमें यो काम छोड़ देणा चाहिए।"[6] केवल रोजगार बदलने की इच्छा नहीं, बल्कि जाति द्वारा थोपी गई पहचान से मुक्ति और स्वाभिमानपूर्ण जीवन की आकांक्षा का प्रतीक है। वहीं भूरे अपने पुत्र छुटकू को विद्यालय भेजने का सपना देखता है। शिक्षा के माध्यम से वह अपने बच्चे को जातिगत पेशे से मुक्त करना चाहता है। यह आत्मसम्मान की स्थापना का सशक्त संकेत है।

5. 'चमनकली' में शिक्षा और जातिगत पूर्वाग्रह का प्रतिरोध

इसी प्रकार रजतरानी मीनू की कहानी "चमनकली' में ऊषा जातिगत अपमान के सामने झुकती नहीं, बल्कि तर्क और विवेक के आधार पर उसका प्रतिरोध करती है। जब चमनकली दलित समुदाय के प्रति अपमानजनक टिप्पणियाँ करती है, तब ऊषा स्पष्ट शब्दों में प्रश्न करती है- "फिर तुम चमार-चूहड़े को नीच क्यों कहती हो?"[7] यह संवाद दलित आत्मसम्मान की निर्भीक अभिव्यक्ति है। कहानी के अंत में चमनकली का अपनी भूल स्वीकार करना यह दर्शाता है कि शिक्षा और संवेदनशील संवाद सामाजिक परिवर्तन तथा मानवीय सम्मान की स्थापना का माध्यम बन सकते हैं।

6. 'मोहरे' में नैतिकता, कर्तव्य और स्वाभिमान

जयप्रकाश कर्दम की कहानी 'मोहरे' में आत्मसम्मान और स्वाभिमान की स्थापना अत्यंत प्रभावशाली ढंग से चित्रित हुई है। कहानी का मुख्य पात्र सत्यप्रकाश एक ईमानदार, कर्तव्यनिष्ठ और सिद्धांतवादी शिक्षक है। वह छात्रों के भविष्य को सर्वोपरि मानता है और किसी भी प्रकार के दबाव, षड्यंत्र या अन्याय के सामने अपने नैतिक मूल्यों से समझौता नहीं करता। यद्यपि अंततः वह षड्यंत्र का शिकार होकर स्थानांतरित कर दिया जाता है, फिर भी उसका आत्मसम्मान और स्वाभिमान अक्षुण्ण रहता है।

सत्यप्रकाश शिक्षा को केवल नौकरी नहीं, बल्कि सामाजिक दायित्व मानता है। वह छात्रों को "इम्पोर्टेन्ट प्रश्न' बताकर परीक्षा पास कराने के बजाय सम्पूर्ण पाठ्यक्रम पढ़ने के लिए प्रेरित करता है। वह कहता है- "सब पाठ और सारे प्रश्न इम्पोर्टन्ट हैं। पढ़ाई का उद्देश्य केवल परीक्षा पास करना नहीं, बल्कि जीवन में आगे बढ़ना है।"[8] यह कथन उसके आत्मसम्मान, आदर्शवादी दृष्टिकोण और शिक्षक धर्म के प्रति उसकी निष्ठा को व्यक्त करता है। जब छात्र मनोज के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई करते हुए वह उसे कक्षा में भेजता है, तो कुछ स्वार्थी शिक्षक इस घटना को बढ़ा-चढ़ाकर उसके विरुद्ध शिकायत करा देते हैं। इसके बावजूद सत्यप्रकाश अपने कर्तव्य और सत्य से पीछे नहीं हटता। वह स्पष्ट कहता है- "सर, लगता है कहीं पर कोई गलतफहमी हुई है।"[9] यह कथन बताता है कि वह झूठ स्वीकार करके स्वयं को बचाने का प्रयास नहीं करता, बल्कि सत्य के आधार पर अपनी बात रखता है।

सत्यप्रकाश मानता है कि शिक्षक का दायित्व केवल पढ़ाना नहीं, बल्कि समाज को जागरूक बनाना भी है। वह अपने साथियों से कहता है कि सरकारी विद्यालयों में पढ़ने वाले अधिकांश बच्चे वंचित वर्ग से आते हैं, इसलिए उन्हें पूरी निष्ठा से

पढ़ाना चाहिए। यह दृष्टिकोण उसके सामाजिक स्वाभिमान और उत्तरदायित्व का परिचायक है। कहानी के अंत में सत्यप्रकाश पर झूठा आरोप लगाकर उसका स्थानांतरण कर दिया जाता है। वह मानसिक रूप से आहत होता है, लेकिन अपने सिद्धांतों और आत्मसम्मान से समझौता नहीं करता। कहानी का अंतिम कथन उसके स्वाभिमान और सामाजिक चेतना का सार प्रस्तुत करता है-

"मेरे समाज के लोग दूसरों के हाथों के मोहरे कब तक बनते रहेंगे?"[10] यह कथन केवल सत्यप्रकाश की पीड़ा नहीं, बल्कि पूरे दलित समाज के आत्मसम्मान, आत्मनिर्णय और स्वाभिमान की स्थापना का उद्घोष है।

'मोहरे' कहानी में जयप्रकाश कर्दम ने सत्यप्रकाश के चरित्र के माध्यम से यह स्थापित किया है कि आत्मसम्मान और स्वाभिमान व्यक्ति की सबसे बड़ी शक्ति हैं। परिस्थितियाँ चाहे कितनी भी प्रतिकूल हों, यदि व्यक्ति सत्य, ईमानदारी और अपने नैतिक मूल्यों पर अडिग रहता है, तो वह पराजित होकर भी नैतिक रूप से विजयी रहता है। कहानी दलित चेतना के साथ-साथ स्वाभिमान, सामाजिक न्याय और नैतिक साहस की सशक्त अभिव्यक्ति है।

7. 'बैल की खाल' में सामाजिक बहिष्कार और मानवीय संवेदना

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी बैल की खाल' दलित जीवन की सामाजिक, आर्थिक और मानसिक त्रासदी का अत्यंत मार्मिक चित्रण करती है। कहानी केवल मृत पशुओं की खाल उतारने वाले दो दलित पात्रों के काले और भूरे की दयनीय स्थिति का वर्णन नहीं करती, बल्कि उनके भीतर जागते आत्मसम्मान, स्वाभिमान और मानवीय गरिमा की चेतना को भी उजागर करती है। सदियों से जाति-आधारित पेशे में बँधे होने के बावजूद दोनों पात्र अपने जीवन की विवशताओं पर विचार करते हैं और सम्मानपूर्ण जीवन की आकांक्षा व्यक्त करते हैं। यही कहानी का केंद्रीय बिंदु है।

कहानी में काले पहली बार अपने पुश्तैनी पेशे के प्रति असंतोष व्यक्त करता है। वह समझ चुका है कि यह कार्य केवल जीविका नहीं, बल्कि सामाजिक अपमान का कारण भी है। इसलिए वह कहता है- "भूरे, हमें यो काम छोड़ देणा चाहिए!"[11] यह कथन केवल रोजगार बदलने की इच्छा नहीं है, बल्कि जाति द्वारा थोपी गई पहचान के विरुद्ध विद्रोह है। काले का यह विचार उसके भीतर जन्म ले रहे आत्मसम्मान का प्रतीक है। काले समाज द्वारा किए जाने वाले अपमान को याद करते हुए कहता है- "सड़ने दे... इस सड़ांध में हम गले-गले तक डूब जाते हैं। किसे परवाह है... कोई अपने धोरे (पास) बी ना बैठावे है"[12] यह कथन बताता है कि दलित केवल आर्थिक रूप से नहीं, बल्कि सामाजिक रूप से भी बहिष्कृत हैं। अब वे इस अपमान को स्वाभाविक नहीं मानते, बल्कि उसके प्रति प्रतिरोध का भाव विकसित कर रहे हैं। यही आत्मसम्मान की चेतना है। शहर का चमड़ा व्यापारी (लाला) भी उनका आर्थिक शोषण करता है। काले उसकी अमानवीय मानसिकता पर आक्रोश व्यक्त करता है- "वो सहर का लाला... सौ बातें सुणावे है... पूरा राक्छस है राक्छस वह लाला"[13]

यह कथन बताता है कि दलित पात्र अब शोषण को चुपचाप स्वीकार नहीं करते, बल्कि उसका विरोध करने लगे हैं। उनका मौन टूट रहा है।

कहानी का सबसे मार्मिक प्रसंग तब आता है जब सड़क दुर्घटना में घायल बछड़ी तड़प रही होती है। वही काले और भूरे, जो मृत पशुओं की खाल उतारकर जीविका कमाते हैं, उसे बचाने के लिए व्याकुल हो उठते हैं- "भूरे! कहीं थोड़ा पानी हो तो लेकर आ... जल्दी कर... देख कैसे तड़प रही है!" और आगे- "भूरे जल्दी आ... डॉक्टर को लेके आना है, बछड़ी को बहुत चोट लगी है।"[14] यह प्रसंग सिद्ध करता है कि जिन लोगों को समाज "अछूत" समझता है, उन्हीं के भीतर सबसे अधिक मानवीय करुणा और संवेदना है। उनका स्वाभिमान हिंसा में नहीं, बल्कि जीवन बचाने के प्रयास में दिखाई देता है। यद्यपि गांव वाले काले और भूरे का अपमान करते हैं, फिर भी वे मृत बैल को गांव से बाहर ले जाकर सामाजिक दायित्व निभाते हैं। वे किसी प्रतिशोध की भावना से कार्य नहीं करते, बल्कि मानवीय उत्तरदायित्व निभाते हैं। इससे उनकी नैतिक श्रेष्ठता सामने आती है।

बैल की खाल' केवल दलित जीवन की विवशताओं की कहानी नहीं, बल्कि आत्मसम्मान, स्वाभिमान और परिवर्तन की चेतना की कहानी है। काले और भूरे अपने जातिगत पेशे से मुक्ति, शिक्षा, सम्मानजनक रोजगार और मानवीय गरिमा की आकांक्षा रखते हैं। वे अपमान और शोषण को नियति मानकर स्वीकार नहीं करते, बल्कि उससे बाहर निकलने का सपना देखते हैं। विशेष रूप से काले का जातिगत पेशा छोड़ने का निर्णय और भूरे का अपने बेटे को पढ़ाने का संकल्प इस बात का प्रमाण है कि दलित चेतना का मूल उद्देश्य मानवीय गरिमा और आत्मसम्मान की स्थापना है। यही कहानी का सबसे महत्वपूर्ण संदेश है।

8. निष्कर्ष

दलित कहानियाँ आत्मसम्मान और स्वाभिमान की चेतना का सशक्त साहित्यिक दस्तावेज हैं। वे यह संदेश देती हैं कि सम्मान किसी जाति या जन्म का विशेषाधिकार नहीं, बल्कि प्रत्येक मनुष्य का मौलिक अधिकार है। इन कहानियों के पात्र अन्याय और अपमान को स्वीकार करने के बजाय उसका प्रतिरोध करते हैं तथा शिक्षा, संघर्ष, आत्मनिर्भरता और संवैधानिक अधिकारों के माध्यम से अपनी अस्मिता स्थापित करते हैं। इसलिए दलित कहानी साहित्य सामाजिक परिवर्तन के साथ-साथ मानवीय गरिमा और आत्मसम्मान की स्थापना का प्रभावी माध्यम सिद्ध होता है।

संदर्भ सूची

1. बेचैन श्योराज सिंह, कहानी संग्रह-भरोसे की बहन, रावण, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 53-66
2. वही
3. वही
4. वही
5. वही
6. ओमप्रकाश वाल्मीकि, प्रतिनिधि कहानियाँ, बैल की खाल, किताबघर प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण-2013, पृ. 13-20
7. मीनू रजतरानी, कहानी संग्रह-क्या मैं बता दूँ, चमनकली, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 78-89

8. सिंह पुन्नी, कमला प्रसाद, राजेन्द्र शर्मा, भारतीय दलित साहित्य परिप्रेक्ष्य, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 200-209

9. वही

10. वही

11. ओमप्रकाश वाल्मीकि, प्रतिनिधि कहानियाँ, बैल की खाल, किताबघर प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण-2013, पृ. 13-20

12. वही

13. वही

14. वही